International Journal of Sanskrit Research 2020; 6(2): 138-141

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2020; 6(2): 138-141
© 2020 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 12-01-2020
Accepted: 16-02-2020

डा0 वीनाविश्नोई शर्मा
गु0कां0 वि0 विद्यालय हरिद्वार, उत्तराखंड, भारत

Corresponding Author:
डा0 वीनाविश्नोई शर्मा
गु0कां0 वि0 विद्यालय हरिद्वार, उत्तराखंड, भारत

योग का विश्व शान्ति में महत्व

डा0 वीनाविश्नोई शर्मा

शोध सार
योगसाधना एक निवृत्ति का मार्ग है।प्रवृत्ति मार्ग भोगवादी होता है, जो मनुष्य को शाश्वत सुख प्रदान नही कर सकता। वह आपात रुप से इन्द्रियों को क्षणिक सुख तो प्रदान कर सकता है किन्तु अन्त में भोगवादी मार्ग दुखदायक व अन्धकार में ले जाने वाला ही होता है। इसलिए चिन्तनशील मनुष्य आपात रमणीय विषयों से भोगनिवृत्त होकर योगसाधना में प्रयत्नशील होते हैं। योग के निरन्तर अभ्यास से मनुष्य का शारीरिक, चारित्रिक,मानसिक,भावात्मक, बौद्धिक व आध्यात्मिक विकास होता है। जिससे बैर भाव का नाश,परोपकार की भावना का उदय होकर मानव में नैतिकगुणों का प्रार्दुभाव होता है, जो उसे भ्रष्टाचार, आतंकवाद जैसी भयानक भावनाओं से उपर उठाकर विश्व शान्ति की ओर अग्रसर करते है।

शब्दकुंजी: अहिंसा, प्रवृत्ति–निवृत्ति,विश्व–शान्ति, योगसाधना, अष्टांग योग

प्रस्तावना
महर्षिपतंजलि द्वारा आविष्कृत और परिष्कृत योगाभ्यास का मार्ग सर्वदेश,सर्वकाल और सर्वजनों के लिए कल्याणकारी है। योग साधना कोई ऐसा आचरण नहीं है,जिसकी प्रासंगिकता किसी विशेषसमाज, विशेषवर्ग, विशेषजाति, विशेषराष्ट्र या विशेषकाल में ही अनुभव की जा सके। अपितु यह तो शाश्वत कल्याण का मार्ग है, जो प्रत्येक मनुष्य के लिए क्षेत्र व आयु में समान रुप से उपयोगी है।
योगसूत्र के शब्दोंमें यह चित्तवृत्तियों का निरोध करते हुए अपने वास्तविक स्वरुप में स्थित होने की प्रकियाहै।

''योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः[1]

'महोपनिषद् में मनको शान्त करने के उपाय को योगकहाहै।–

''मनःप्रशमनोपायो योगइत्यभिधीयते''[2]

महर्षि पतंजलि ने सम्पूर्ण व्यक्तित्व विकास का सुव्यवस्थित मार्ग अष्टांग योग को बताया है।–

''यमनियमासनप्राणायामप्रत्याहारधारणाध्यानसमाधायोऽष्टावङ्गानि ''[3]

योगसाधना एक निवृत्ति का मार्गहै। प्रवृत्ति मार्ग भोगवादी होता है, जो मनुष्य को शाश्वतसुख प्रदान नही कर सकता। वह आपात रुप से इन्द्रियोंको क्षणिकसुख तो प्रदान कर सकता है,किन्तु अन्त में भोगवादी मार्ग दुखदायक व अन्धकार में ले जाने वाला ही होता है। इसलिए चिन्तनशील मनुष्य आपात रमणीय विषयों से भोगनिवृत्त होकर योगसाधना में प्रयत्नशील होते हैं।
प्राचीनकाल में योगसाधना जितनी महत्वपूर्ण और कल्याणकारी थी, उससे कहीं अधिक इसका महत्व आधुनिक सन्दर्भ में है। आज का मनुष्य, समाज और राष्ट्र पहले की अपेक्षा अधिक संतप्त और दुखी है। यद्यपि आज विश्व में वैज्ञानिक उन्नति चरमसीमा पर है जिसने मानव जीवन को अधिक सुविधा सम्पन्न और भौतिकदृष्टि से समृद्धिशाली बना दिया है, किन्तु ये सभी समृद्धियॉ मनुष्य को शान्ति और सन्तोष प्रदान नहीं कर सकीं। भगवान श्रीकृष्ण गीता में उपदेश देते हैं कि अशान्त व दुखी मन, जब सुव्यवस्थित होकर शान्त व समस्थिति को प्राप्त होता है, उसे योग कहते हैं।

''समत्वं योगउच्यते ''[4]

भगवान श्रीकृष्ण ने कर्मों में कुशलता को भी योग कहा है–

''योगः कर्मसुकौशलम् ।[5]

आज विश्व में सर्वत्र अशान्ति है, नैतिकता का ह्रास हो रहा है,मनुष्य स्वार्थ में लिप्त है। भौतिकवाद की अन्धीदौड़ में भाग रहा आतंकवाद और भ्रष्टाचार जैसी समस्याओं से घिरा है। ऐसे समय में योग ही विश्व शान्ति का पथ प्रदर्शित कर सकता है। आधुनिक सन्दर्भ में योगसाधना के अभ्यास से मनुष्य को क्या–क्या लाभ हो सकते हैं और वह कौन–कौन से संकटों पर विजय प्राप्त कर सकता है, इन्हें संक्षेप में निम्न प्रकार देख सकते हैं–

आपसी द्वेष का त्याग–

आज का मानव उसका परिवार, समाज, देश और समस्त विश्व द्वेष और बैर भावना की अग्नि में निरन्तर तप रहा है। मनुष्य आज अपनी उन्नति से सन्तुष्ट नही,अपितु दूसरे की समृद्धि देखकर दुखी है। यही बात सम्पूर्ण विश्व पर भी लागू होती है। आज एक देश दूसरे देश को नष्ट करने में लगाा है। मनुष्य ने आज इतने घातक अणुबम, परमाणुबम आदि अस्त्र बना लिए हैं, जिनसे मानव सभ्यता का नामो निशान कुछ ही घण्टों में मिट सकता है । भौतिक प्रगति में आगे निकलने की होड़ मनुष्य को उस अन्धकार की ओर ले जा रही है, जहॉ से वह चाह कर भी नही लौट सकता। आपसी बैर–भाव व द्वेष हिंसा को जन्म दे रहा है जिससे कभी शान्ति की उम्मीद ही असम्भव है। मनु ने यमनियमों का पालन ही मानव धर्म कहा है–

न हिवैरेणवैराणि शाम्यन्तीहकदाचन्।
अवैरेणतु शाम्यन्ति एष धर्मः सनातनः।।
अहिंसासत्यमस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
एतंसामासिकं धर्मंचातुर्वर्ण्येअब्रवीन्मनुः।।[6]मनु010/63

शाश्वत् सुख का उपाय अहिंसा ही है। अहिंसा से ही द्वेषभावना का त्याग किया जा सकता है। महर्षिपतंजलि ने यमों में सर्वप्रथम अहिंसा को ही स्थान दिया है।–

अहिंसाप्रतिष्ठायांतत्सन्निधौवैरत्यागः ।[7]

अहिंसा को अपना कर ही मनुष्य, समाज व सकल संसार सुखी व समृद्ध हो सकता है,तभी विश्व में शान्ति स्थापित हो सकती है। मनु का कहना है कि पाप करने वाला यदि यह माने कि हमें कोई नही देखता तो ऐसा नही है, उसे देवता देखते हैं और अपनी अन्तरात्मा देखती है–

मन्यन्तेवैपापकृतो न कश्चित्पश्यतीतिनः।[8]
तांस्तुदेवाः प्रपश्यन्तिस्वस्यैवान्तरपूरुषः।। मनु08/85

अहिंसा के विषय में मनु कहते हैं कि आत्मा का विचार करने वाला द्विजादि घरमें, गुरु के स्थानमें, वन में निवास करता हुआ आपत्ति के समय भी वेदविहित हिंसा से भिन्न पशु का वध न करे।–

गृहेगुरावरण्ये वा निवसन्नात्मवान्द्विजः।
नावेदविहितांहिंसामापद्यपिसमाचरेत्।।[9] मनु05/43

तनाव से मुक्ति

आज प्रगतिशील युग में मनुष्य सुख समृद्धि को पाकर भी तनाव युक्त जीवन बिता रहा है। परिवार टूट रहे हैं,परिवार के लोग एक दूसरे पर विश्वास नही करते, प्रत्येक व्यक्ति एक अनजाने भय से त्रस्त है। योग की भाषा में इसका कारण है, असत्य और चोरी का आचरण। मनुष्य अल्प समय में थोड़े से परिश्रम से अधिक से अधिक धनोपार्जन करने की होड़ में लगा है, जिसके लिए असत्य, अन्याय, चोरी, रिश्वतखोरी आदि भ्रष्ट आचरण का सहारालेताहै। धन तो वह अर्जित कर लेता है किन्तु जिस सुख व शान्ति के लिए यह सब करता उसे प्राप्त नही कर पाता। परिणामस्वरुप पहले से भी अधिक तनाव में रहकर मधुमेह, अनियमित रक्तचाप, घबराहट, हृदय रोग जैसी भयानक बीमारियों का शिकार हो जाता है।

योगसूत्र में महर्षि पतंजलि ने सत्य और अस्तेय के आचरण को योगसाधना के लिए अनिवार्य बताया है। सत्याचरण और अस्तेय के पालन से मनुष्य तनावमुक्त रह सकता है। सत्याचरण करनेवाले की समस्त क्रियायें सफल होती हैं और अस्तेय के पालन से वह अपरिमितरत्नों का स्वामी बन सकताहै–

सत्यप्रतिष्ठायांक्रियाफलाश्रयत्वम्।
अस्तेयप्रतिष्ठायांसर्वरत्नोपस्थानम्।।[10]

मनु ने कहा है कि वाणी में सत्य का संचार करके व मन में सत्य को धारण करके मन को पवित्र रखना चाहिए –

सत्यपूतांवदेद् वाचंमनः पूतंसमाचरेत् ।[11]मनु 6/46

योगसारसंग्रह में कहा गया हैं कि सत्य में सब कुछ प्रतिष्ठित है तथा सत्य से संसार में सब कुछ प्राप्त किया जा सकता है–

सत्येनसर्वमाप्नोतिसत्य सर्वंप्रतिष्ठितम्।।[12] योगसारसंग्रह पृ0 36

धर्म के दश लक्षणोंमेंसत्य कोप्रमुख मानागयाहै–

धृतिः क्षमा दमः अस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्यासत्यमक्रोधोदशकं धर्मलक्षणम्।।[13]मनु 6/92

मनु कहते हैं कि सत्य भी प्रिय वचनों से बोलना चाहिए–

सत्यंब्रूयात्प्रियंब्रूयान्नब्रूयात्सत्यमप्रियम्।
प्रियं च नानृतंब्रूयादेष धर्मः सनातनः। [14]मनु 4/138

उत्साह और बल की प्राप्ति–

आज समाज में दुर्बल शरीर मुरझाये चेहरे और उत्साह रहित हृदय वाले युवक सर्वत्र देखने को मिलते हैं। ऐसे युवाओं की संख्या दिनप्रति–दिन बढ़ती ही जा रही है। भौतिकवादी संस्कृति ने उनके शरीरों को आराम पसन्द, आलसी, अकर्मण्य और निरुत्साही बना दिया तथा मस्तिष्क में विभिन्न कुंसस्कार और विकृतियॉ उत्पन्न कर दी हैं। ब्रह्मचर्य की उपेक्षा से समाज आज घातक रोगों के चंगुल में इस प्रकार खो चुका है कि चिकित्साविज्ञान के निरन्तर प्रगति करने पर भी रोगों और रोगियों की संख्या में निरन्तर वृद्धि होरहीहै।। जनसंख्या के विस्फोट ने विश्व की आर्थिक दशा को तहस–नहस कर दिया है, इस सबका कारण यह है कि हमने अपने प्राचीन ब्रह्मचर्यव्रत के आदर्शों को उपेक्षित कर दिया है। शारीरिक और मानसिक रोगों को दूर करने का एक ही उपाय है–ब्रह्मचर्यव्रत का पालन। ब्रह्मचर्य के सेवन से मनुष्य समाज और देश बलशाली हो सकता है। इसीलिए पतंजलि ने योग–साधना के लिए ब्रह्मचर्य के पालन को सर्वाधिक महत्व दिया है। उनकी मान्यता है कि ब्रह्मचर्य के पालन से ही वीर्य अर्थात् बल और पराक्रम की वृद्धि होती है।

ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायांवीर्यलाभः।।[15]

अर्थव्यवस्था की सुदृढ़ता

विज्ञान ने आज के युग में पर्याप्त प्रगति की है, किन्तु जनसंख्या के

विस्फोट ने समस्त प्रगति पर पानी फेर दिया है। देश की अर्थव्यवस्था डगमगा रही है। हमारा देश ऋण के भार से आक्रान्त है। मनुष्य की आर्थिक प्रगति नही हो पा रही है। उसे आज की चिन्ता नही है,अपितु वह भविष्य के लिए धनसंग्रह करने में लगा है। परिग्रह की भावना ने धनवानों को और अधिक धनवान बना दिया है, निर्धनों को और अधिक निर्धन बना दिया। यद्यपि धन का संग्रह अनुचित नही है, किन्तु परिग्रह अर्थात् अर्थसंग्रह को लक्ष्य बना लेना व्यक्ति, समाज और देश तीनों के लिए घातक है। यही कारण है कि प्रगति के नये–नये साधनों का उपयोग करने पर भी हम आर्थिक रुप से पिछड़ गये हैं।

इसलिए महर्षिपतंजलि ने अपरिग्रह का सन्देश दिया है। अपरिग्रह अर्थात् विषयभोग की वस्तुओं का संग्रह न करना एक ऐसा यम है,जो योगसाधना के लिए तो उपयोगी है ही, आर्थिक प्रगति के लिए भी अत्यन्त उपयोगी है। येागसार में कहा गयाहै किअ ापत्तिकाल में भी इच्छापूर्वकद्रव्य का संग्रह न करना अपरिग्रह कहलाता है–

द्रव्यणामप्यनादानमापद्यपि यथेच्छया।
अपरिग्रहइत्युक्तस्तंप्रयत्नेनपालयेत्।। योगसारसंग्रह पृ0 37

जब प्रत्येक व्यक्ति उतने ही धन का संग्रह करेगा, जितनी उसे आवश्यकता है तो समाज में धन की विषमता स्वतः ही दूर हो जायेगी। मनुस्मृति कहती है कि दुष्ट के प्रसंग से, विरुद्ध कर्म से, पदार्थ होते हुए भी अधिक पदार्थों का छल करके या अधर्मपूर्वक संचय नही करना चाहिए –

नेहेतार्थान्प्रसंगेन न विरुद्धेनकर्मणा।
न विद्यमाननष्वर्थेषुनात्यार्मपि यतस्ततः।।मनु 4/15

कहा गयाहै कि जितने अन्न से पेट भर जाए उतने ही धन पर मनुष्य का अधिकार है। उससे अधिक जो संग्रह करता है,वह चोर है । राजा की ओर से उसे दण्ड दिया जाना चाहिए।–

यावद् भ्रियेत् जठरंतावत्स्वत्वंहिदेहिनाम्।
अधिकं योअभिमन्येत् सस्तेनोदण्डमर्हति।।

मनु महाराज की व्यवस्था है कि आवश्यकता से अधिक धन का संग्रह करके अन्यों के लिए द्रव्यों की न्यूनता उपस्थित न की जाए, सबको समान रुप से भोग सामग्री मिले।

भाष्यकार व्यासदेव ने अपरिग्रह के पॉच दोष बतायेहैं–अर्जन, रक्षण, क्षय, संग और ह्विया। पहले तो धन के अर्जन में ही कष्ट होता है। किसी प्रकार अर्जित कर भी लिया जाए तो उसकी रक्षा की समस्या आती है। धन की कितनी भी रक्षा की जाए, उसका क्षय एक दिन तो होना ही है। धन के संग्रह में संग अर्थात् आसक्ति उत्पन्न होती है, जो मनुष्य को दुख की ओर ले जाती है। धनसंग्रह के लिए हिंसा भी अनिवार्य है क्योंकि दूसरों की हिंसा किए बिना अधिक धन का संग्रह सम्भव ही नही। ये पॉचदोष ही समाज की आर्थिक दशा को छिन्न–भिन्न करते हैं व अशान्ति को जन्म देते हैं। इसलिए महर्षिपतंजलि के योगसूत्र में बताये अपरिग्रह का पालन आर्थिकप्रगति व विश्व शान्ति के लिए अनिवार्य है। महर्षिपतंजलि ने अपरिग्रह की स्थिरता होने पर जन्मकथा का ज्ञान इसका फल बताया है–

अपरिग्रहस्थैर्येजन्मकथन्तासंबोधः।।[16]

यह फल अपरिग्रह का अदृष्ट फल है। यह एक अध्यात्म पक्ष है, यदि हम इस पक्ष को छोड भी दें तो भी इसका दृष्टफल हम सभी प्राप्त कर सकते हैं। इसका दृष्टफल है आर्थिक विषमता की समाप्ति। आर्थिक विषमता समाज को दुर्बल और असन्तुष्ट बनाती है। अपरिग्रह का पालन कर समाज को सुदृढ़ और समृद्ध बनाया जा सकता है, जो विश्व शान्ति के लिए एक बड़ा कदम होगा।

योगसाधना केनियमों का पालन–

इसके अतिरिक्त नियम अर्थात् शौच, सन्तोष,तप, स्वाध्याय,ईश्वरप्रणिधान द्वारा भी सामाजिक व्यक्तित्व विकास कर देश में अमन और शान्ति ला सकते हैं–

''शौचसंतोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः।।[11]

शौच– शौच का अर्थ है सफाई तथा पवित्रता। यहॉ पर शौच का अर्थ है तप,बुद्धि आदि अन्तः करण के वृत्तिरुप राग, द्वेष, काम, क्रोध, लोभ, मोह, घृणा आदि अवगुणों को दया, करुणा, विनम्रता, क्षमा और मैत्री आदि उत्तम सद्गुणों के द्वारा दूर करना। मनु कहते हैं कि जल से शरीर, सत्य से मन, विद्या और तप से आत्मा तथा ज्ञान से बुद्धि की शुद्धि होती है।–

अद्भिगर्गात्राणि शुद्धयन्तिमनः सत्येन शुद्धयति।
विद्यातपोभ्यांभूतात्माबुद्धिर्ज्ञानेन शुद्धयति।।मनु 5/109

शौच का पालन करने से न केवल शारीरिक व्याधियों का अन्त होगा बल्कि राग द्वेष, मोह आदि वृत्तियों का भी नाश होगा । जिससे हमारा शरीर सुन्दर आकर्षक सामर्थ्य शक्ति से भरा तथा शुद्ध विचारों वाला बनेगा तथा शुद्ध विचारों वाला व्यक्ति ही शुद्ध व स्वच्छ समाज का निर्माण कर सकता है।

सन्तोष–सन्तोष नाम तुष्टि का है अर्थात् मन,वचन तथा कर्म से अन्तःकरण में सन्तुष्टि का भावउ दय होना ही सन्तोष है। किसी भी परिस्थिति में सदा प्रसन्नचित्त बने रहना, धैर्य को न खोना सन्तोष है। परिश्रम करके जो फल प्राप्त होता है, उसी में सन्तुष्ट हो जाना ही परमसुख का कारण है, इसीलिए सन्तोष को सबसे बड़ा धन कहा गया है।–

सन्तोषंपरतास्थाय सुखार्थीसंयतोभवेत्।
सन्तोषमूलंहिसुखं दुखमूलंविपर्ययः।। मनु0 4/12

सन्तोष से परमसुख प्राप्त होताहै–

सन्तोषदनुत्तमः सुखलाभः । योगसूत्र 2/42

सन्तोष मनुष्य के समग्र एवं संगठित व्यक्तित्व की महानता एवं दिव्यता को प्रकाशित करने वाला गुण है,उससे आनन्दमय कोश विकसित होता है।–

यदृच्छालाभतोनित्यंमनः पुंसोभवेदिति।
या धीस्तामृषयोप्राहुः सन्तोषंसुखलक्षणम्।।[17]

जिससे व्यक्ति के सामाजिक व्यक्तित्व का समग्र व संगठित विकास होकर समाज में समरसता व शान्ति स्थापित होती है।

तप–

जब किसी व्यक्ति पर कोई विपत्ति आती है तो उसका मन व्याकुल हो उठता है, जिससे मुक्तिपाने के लिए वह अनेक असामाजिक तथा हिंसात्मक कार्य करने को तैयार हो जाताहै। यदि वह तप का दृढ़तापूर्वक पालन करेगा तो आने वाले दुखों से विचलित नही होगा और उनका डटकर सामना करेगा। शरीर व इन्द्रियों के मलों का निवारण तप के द्वारा होकर शरीर व इन्द्रियों पर नियन्त्रण हो जाता है–

कायेन्द्रियसिद्धिरशुद्धिक्षयात्तपसः। योगसूत्र 2/43

अहिंसा,विषय–इन्द्रियों का त्याग, वेदोक्त कर्म और उग्र तप इस संसार में मोक्षपद को प्राप्त करा देते हैं–

अहिंसेयेन्द्रियासंगैर्वैदिकैश्चैवकर्मभिः।
तपश्चरणैश्चोग्रैः साधयन्तीहतत्पदम्।।मनु 6/75

स्वाध्याय– शांकरभाष्य में स्वाध्याय को वाणी का तप कहा गया है। वेदशास्त्रों का अध्ययन व ओम् आदि पवित्र मन्त्रों का जप ही स्वाध्याय है। मोक्षशास्त्रों का अध्ययन तथा प्रणवजाप को स्वाध्याय कहा गया है–

मोक्षशास्त्राणामध्ययनंप्रणवजपो वा । योगसूत्र व्यासभाष्य 2/44।

जोव्यक्ति स्वाध्याय अर्थात् वेदाध्ययन, गायत्री जप और प्रणवजप को एकाग्रचित्त होकर करता है, उसे धर्म अर्थ काम व मोक्ष की प्राप्ति होती है।–

यः स्वाध्यायमधीतः अब्दंविधिनानियतः शुचिः।
तस्य नित्यं क्षरत्येषपयोदधि घृतं मधु।। मनु02/107

स्वाध्याय से इष्टदेव का साक्षात्कार होता है–

स्वाध्यायादिष्टदेवतासम्प्रयोगः । येागसुत्र 2/44

मनुष्य जन्म से मृत्यु तक अलग–अलग व्यक्तियों के सम्पर्क में आता है। वह जैसे वातावरण में रहता है उसका व्यक्तित्व वैसा ही बन जाता है। यदि उसे समाज और परिवार से अच्छा वातावरण मिलता है तो वह अच्छा बनता है । इसके विपरीत बुरा प्रभाव पड़ता है परन्तु यदि मनुष्य स्वाध्याय का पालन करे तो चाहे वह कैसे भी वातावरण में रहे उसके व्यक्तित्व में केवल स्वच्छ व शुद्ध विचारों का ही उदय होगा। वह समाज के प्रत्येक व्यक्ति के कल्याण की कामना ही करेगा। आज देश में बढ़ते आतंकवाद व भ्रष्टाचार जैसी समस्याओं का स्वाध्याय से ही निदान होगा।
ईश्वरप्रणिधान–ईश्वर के प्रति पूर्ण समर्पण का भाव ही ईश्वरप्रणिधान है। हम परमेश्वर से प्रार्थना करते है कि हम जिस इच्छा से आपकी उपासना में लगे हैं, आप उसमें पूर्णता प्रदान करें। हमारे वे समस्त कार्य कर्मफल सहित आपको अर्पित हैं। ऐसा भाव ईश्वरप्रणिधान कहलाता है–

ईश्वरप्रणिधानंतस्मिन् परमगुरासर्वकर्मार्पणाम्।।[18]

इसके अनुसार व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व को विघटित एवं संकुचित करने वाले अहंकार एवं स्वार्थ भावना को परमात्मा की विराट चेतना में विसर्जन कर देना चाहिए। ऐसा करने से अहं परक चेतना का स्थान पराचेतना ले लेती है और व्यक्ति के सामाजिक व्यक्तित्व का विकास होता है। विकसित समाज में शान्ति का वातावरण रहता है।मनुस्मृति में कहा गया है कि जो धर्माचरण करता है, वही सम्पूर्ण सुख प्राप्त करता है, ऐसा आचरण बिना ईश्वर प्रणिधान के सम्भव नही हो सकता। ईश्वर की भक्ति के अतिरिक्त आचरण की पवित्रता आ ही नही सकती। इसलिए मनु कहते हैं कि विद्वान पुरुष को यम–नियमों का पालन करना चाहिए।–

यमान् सेवेत सततं न नित्यं नियमान् बुधः।
यमान् पतत्यकुर्वाणो नियमान्केवलान् भजन् मनु 4/204

इस प्रकार शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय और ईश्वरप्रणिधान आदि जहॉ मनुष्य के चरित्र को अन्दर से समृद्ध बनाते हैं वहीं व्यक्ति और समाज दोनों को परिपूर्ण करते हैं। उपरोक्त तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि योग के निरन्तर अभ्यास से मनुष्य का शारीरिक, चारित्रिक, मानसिक, भावात्मक, बौद्धिक व आध्यात्मिक विकास होता है। जिससे बैरभाव का नाश,परोपकार की भावना का उदय होकर मानव में नैतिक गुणों का प्रार्दुभाव होता है,जो उसे भ्रष्टाचार, आतंकवाद जैसी भयानक भावनाओं से उपर उठाकर विश्व शान्ति की ओर अग्रसर करते है। अन्त में हम कह सकते हैं कि योग की मानव के जीवन में आज पहले से भी अधिक आवश्यकता है। अतः मनुष्य के सम्पूर्ण व्यक्तित्वविकास व विश्व शान्ति के लिए योग एक दिव्य औषधि है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. योगसूत्र 1/2 महर्षि पतंजलि कृत,टीकाकार हरिकृष्णदास गोयन्दका,गीताप्रेस,गोरखपुर
2. महोपनिषद 5/42
3. योगसूत्र 2/29 महर्षि पतंजलि कृत,टीकाकार हरिकृष्णदास गोयन्दका,गीताप्रेस,गोरखपुर
4. गीता 2/48
5. गीता 2/50
6. मनुस्मृति 10/63 कुल्लूकभट्ट टीका,न्यू भारतीय बुक कॉरपोरेशन दिल्ली
7. योगसूत्र 2/35 महर्षि पतंजलि कृत,टीकाकार हरिकृष्णदास गोयन्दका,गीताप्रेस,गोरखपुर
8. मनुस्मृति 8/85
9. मनुस्मृति 5/43
10. योगसूत्र 2/36,37 महर्षि पतंजलि कृत,टीकाकार हरिकृष्णदास गोयन्दका,गीताप्रेस,गोरखपुर
11. मनुस्मृति 6/46
12. योगसार संग्रह पृ0 36
13. मनुस्मृति 6/92
14. मनुस्मृति 4/138
15. योगसूत्र 2/38 महर्षि पतंजलि कृत,टीकाकार हरिकृष्णदास गोयन्दका,गीताप्रेस,गोरखपुर
16. योगसूत्र 2/39 महर्षि पतंजलि कृत,टीकाकार हरिकृष्णदास गोयन्दका,गीताप्रेस,गोरखपुर
17. योगविज्ञान पृ0 54
18. योगसूत्र व्यासभाष्य 2/32